**ओ३म्**

**‘महर्षि दयानन्द और उनका विश्व के कल्याण का अपूर्व कार्य’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 महर्षि दयानन्द (1825-1883) ने विश्व के सभी मनुष्यों व प्राणिमात्र के हित के लिए जो कार्य किया वह अपूर्व एवं सर्वोत्तम है। देश व विश्व की जनता का यह दुर्भाग्य है कि वह उनके कार्यों के यर्थाथ स्वरूप व उन कार्यों की संसार के सभी मनुष्यों के सन्दर्भ में महत्ता व उपयोगिता से परिचित नहीं है। इसका कारण भी मत-मतान्तर व उनके आचार्य व प्रचारक हैं जो अपने अज्ञान व स्वार्थों के कारण सत्य को सामने आने देना नहीं चाहते। **महर्षि दयानन्द के जीवन पर यदि दृष्टि डालें तो उनके जीवन में सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह मिलती है कि उन्होंने सत्य ज्ञान की खोज को अपने जीवन का उद्देश्य बनाकर उसे प्राप्त किया था। ऐसा कोई अन्य मनुष्य जिसके जीवन का उद्देश्य महर्षि दयानन्द के समान हो और उसे अपने उस कार्य में सफलता मिली हो, विश्व के क्षितिज पर दृष्टिगोचर वा उपलब्ध नहीं होता।** विज्ञान के सामने जो भी बातें आती हैं, वह उनकी परीक्षा कर उसमें सत्य को स्वीकार करता है और असत्य को अस्वीकार व उनका तिरस्कार कर देता है। परन्तु धार्मिक सिद्धान्तों व मान्यताओं में विज्ञान के इस सिद्धान्त, सत्य का ग्रहण व असत्य का त्याग, को हम कहीं लागू होते हुए नहीं देखते। सभी मत अपने अपने सत्यासत्य मिश्रित सिद्धान्तों को मानते चले आ रहे हैं और शायद प्रलय पर्यन्त मानते ही रहेंगे? इसका एक कारण मत-मतान्तरों के लोगों का अपना अपना अज्ञान व स्वार्थ आदि हैं। वहीं भिन्न-भिन्न देशों की राजनैतिक व्यवस्थाओं द्वारा मत-मतान्तरों के पोषण सम्बन्धी व्यवस्थायें भी हैं। पाठक सुविज्ञ हैं, वह इन बातों को भली प्रकार से जानते हैं, अतः इस पर अधिक चर्चा की आवश्यकता नहीं है।

 **महर्षि दयानन्द ने 14हवें वर्ष की आयु में शिवरात्रि के दिन की जाने वाली मूर्तिपूजा को देखकर उसकी निस्सारता वा व्यर्थता को समझ लिया था।** 13 वर्ष के बालक के मूर्तिपूजा पर समाधानकारक उत्तर न शिवभक्त उनके पिता के पास थे न किसी अन्य पौराणिक विद्वान व आचार्य के ही पास। इसने बालक दयानन्द के सम्मुख धर्म वा मत में निहित असत्य मान्यताओं व सिद्धान्तों का संकेत दे दिया था। इसी को आगे बढ़ाते हुए उन्होंने 21 वर्ष की आयु तक शास्त्राध्ययन कर विवाह से बचने के लिए और सत्य ज्ञान को प्राप्त करने के लिए माता-पिता के भौतिक सुख-सुविधाओं से पूर्ण गृह का त्याग कर दिया था। **गृहत्याग के बाद सन् 1863 तक के 17 वर्षों तक सत्य धर्म व सत्य ज्ञान की खोज करते रहे थे।** इसी बीच उन्होंने योग विद्या सीखी जिससे वह ईश्वर का साक्षात्कार करने में समर्थ हुए। उन्हें इस बात का ज्ञान हुआ कि ईश्वर का ज्ञान, ईश्वर की स्तुति प्रार्थना उपासना, ईश्वर का ध्यान, धारणा और समाधि तथा ईश्वर का साक्षात्कार करना ही मनुष्य जीवन का मुख्य उद्देश्य है। यह लक्ष्य भी विज्ञान की तरह अनेक क्रियाओं व सदाचारण करने से प्राप्त होता है। इनसे इतर विवेक की प्राप्ति के लिए सब सत्य विद्याओं का अध्ययन करके उनकी प्राप्ति करना भी आवश्यक है। उनकी दृष्टि में बिना सत्य विद्याओं की प्राप्ति के केवल योगाभ्यास व ईश्वर का ध्यान वा साक्षात्कार करना अधूरा जीवन था। **वह दोनों ही उद्देश्यों की पूर्ति में कृतकार्य वा सफल हुए थे।** सब सत्य विद्याओं का संसार मे एकमात्र ग्रन्थ **‘चार वेद संहितायें’** हैं जिन्हें संसार ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद के नाम से जानता है। यह चार मन्त्र संहितायें सृष्टि की आदि मे चार ऋषियों **‘अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा’** के पवित्र हृदयों में ईश्वर द्वारा स्थापित समस्त सम्भव सत्य ज्ञान है। महाभारत काल तक हमारे देश में सहस्रों ऋषि व विद्वान होते थे व परस्पर व्यवहार की भाषा संस्कृत होती थी जिस कारण वेद के मन्त्रों के सत्य अर्थ लोगों को विदित होते थे। महाभारत काल के बाद विद्वानों व ऋषियों की निरन्तर कमी होती गई जिससे वेदों के अर्थ के अनर्थ होने लगे। **वेदों के अर्थ के अनर्थ होने से अज्ञान व भ्रान्तियां उत्पन्न हुईं, इससे अज्ञानपूर्वक कार्य होने लगे और इसी के परिणाम से हिंसात्मक यज्ञ व मिथ्याचार की बातें उत्पन्न हुईं जो समय-समय पर अनेक मत-मतान्तरों की उत्पत्ति का कारण बनीं।**

यह सर्वविदित है कि जहां अन्धकार होता है वहां अन्धकार दूर करने के लिए दीपक जलाना ही पड़ता है। दीपक कई प्रकार के हो सकते हैं। कोई कम प्रकाश देता है और कोई अधिक। इसी प्रकार के सभी मत-मतान्तर हैं जो दीपक के समान हैं जिन्होंने अपने अपने समय व बाद में भी अज्ञान के अन्धकार को कुछ-कुछ दूर करने का प्रयास किया है। अज्ञान को पूर्णतया नष्ट करने के लिए जिस पूर्ण प्रकाश, ज्ञान वा विद्या की आवश्यकता थी, वह मत-मतान्तरों के संस्थापकों व आचार्यों के पास नहीं थी और संसार के किसी भी मनुष्य के पास, वेदों वा ऋषि परम्परा के समाप्त होने के कारण, हो भी नहीं सकती। यह क्षमता वा योग्यता तो केवल सृष्टि की रचना करने वाले परम पिता परमेश्वर व उसके वेद ज्ञान में ही हुआ करती है। महर्षि दयानन्द को खोज करते हुए समस्त ज्ञान वा विद्याओं के स्रोत इन वेदों के सत्य अर्थों की कुंजी, अष्टाध्यायी-महाभाष्य पद्धति, गुरु विरजानन्द सरस्वती से प्राप्त हुई थी। वेदों के रहस्यों को जानने की इस कुंजी से दयानन्द जी ने सन् 1863 से 1883 के अपने वेद भाष्य व इतर वेद प्रचार कार्यों को पूरा करने का भरसक प्रयत्न किया। **उन्होंने चार वेदों का संस्कृत व आर्यभाषा हिन्दी में भाष्य करते हुए लिखा भी है कि यदि ईश्वर की कृपा बनी रही और उनका वेद भाष्य का कार्य पूर्ण हो गया तो उस दिन देश देशान्तर में सर्वत्र ज्ञान के क्षेत्र में सूर्य का सा प्रकाश हो जायेगा कि जिसको मेटने, दृष्टि से ओझल करने व उसे स्वीकार न करने की स्थिति किसी मनुष्य वा मत-मतान्तर की नहीं होगी।** इसे मनुष्य जाति का दुर्भाग्य ही कहेंगे कि अज्ञानी व स्वार्थप्रिय लोगों को मनुष्य की भलाई का यह कार्य पसन्द नहीं आया और उन्होंने स्वामी दयानन्द को विष देकर उनके शरीर को 30 अक्तूबर, सन् 1883 को समाप्त कर दिया जिससे वेदों का सूर्य अस्त हो गया और हम उनके पूर्ण प्रकाश सं वंचित हो गये। वेदों के भाष्य का कार्य अपूर्ण रहने के अनेक कारण थे। महर्षि दयानन्द को अपने जीवन में योग्य लिपिकर और विद्वान नहीं मिले जो उनके बोले गये वचनों को ठीक-ठीक लिखते और उनके संस्कृत में लिखाये गये वचनों का सरल व सुबोध हिन्दी में अनुवाद करते। इसके अतिरिक्त दयानन्द जी को वेदों का भाष्य करने के साथ-साथ एक स्थान से दूसरे स्थानों पर मौखिक प्रचार, शास्त्रार्थ, शंका समाधान व आर्यसमाजों को स्थापित करने के लिए भी जाना पड़ता था जिसमें समय लगता था तथा जिसका प्रतिकूल प्रभाव वेद भाष्य के कार्य पर भी पड़ता था। महर्षि दयानन्द जी की मृत्यु से मनुष्य जाति का बहुत बड़ा अपकार हुआ अन्यथा हमें वेद भाष्य सहित अनेक नये ग्रन्थों सहित उनके अनेक विषयों के उपदेश सुनने व पढ़ने को मिल सकते थे जिससे तत्कालीन व बाद की मनुष्य जाति वंचित हो गयी। शोक वा महाशोक।

 महर्षि दयानन्द ने अपने जीवन में जितना कार्य किया वह वेद के सत्य अर्थों सहित धर्म का यथार्थ व सत्य स्वरूप प्रस्तुत करने के साथ मत-मतान्तरों की अविद्याजनित बातों का प्रकाश करने में समर्थ है। यह सर्वविदित तथ्य है कि जितने मत-मतान्तर होंगे वह मनुष्यों को आपस में बाटेंगे व लड़ायेंगे, इतिहास व वर्तमानकाल इस बात का प्रमाण है, जिससे हिंसा आदि होती रहेगी और स्थाई शान्ति की आशा नहीं की जा सकती। **इससे भी बड़ी बात यह है कि मत-मतान्तर का व्यक्ति योग विद्या व वैदिक ज्ञान से दूर होने के कारण अपनी पूर्ण बौद्धिक व आत्मिक उन्नति नहीं कर सकता।** बौद्धिक उन्नति न होने से इसका कुप्रभाव मनुष्यों की शारीरिक उन्नति पर भी सीधा पड़ता है। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है कि आजकल के वैज्ञानिक भी मनुष्य का संतुलित व स्वास्थ्यवर्धक भोजन क्या हो, निश्चित नहीं कर पाये। आज भी संसार के लोग भिन्न-भिन्न पशु, पक्षी, जलचर, थलचर व नभचर आदि प्राणियों की निर्दयतापूर्वक हत्या कर अर्थात् हिंसा कर, उसे पकाकर खा जाते हैं। यह व्यवहार मनुष्य के प्राकृतिक स्वभाव व पवित्र व्यवहार के विपरीत और मनुष्य की शारीरिक, सामाजिक, आत्मिक सहित इस जन्म व परजन्म की उन्नति में बाधक है। इन कार्यों से मनुष्य योगाभ्यास, ईश्वर के ध्यान व उसकी प्राप्ति के कार्यों से दूर होकर अपने वर्तमान व भावी जन्म को बिगाड़ कर युगों-युगों तक के लिए अवनति वा दुःख की स्थिति को उत्पन्न करता है। आज संसार के लोग आधुनिक जीवन शैली के कारण नाना प्रकार के रोगों से ग्रस्त होकर अल्पायु में ही मर जाते हैं। कुछ आतंकवाद का शिकार होकर तो कुछ दुर्घटनाओं में और अनेक स्वादिष्ट भोजन के सेवन व अनियमित दिनचर्या से अल्पायु मे ही चल बसते हैं। उनका परजन्म भी इस जन्म के शुभ वा अशुभ कर्मों का परिणाम होता है। अनुमान किया जा सकता है कि ऐसे लोग भोग योनि, निन्दित पशु, पक्षी, स्थावर आदि में ही जायेंगे। अशुभ कर्मों को करके वह स्वतन्त्र वा मोक्ष को प्राप्त नहीं हो सकते। पर जन्म में उन्नति तो तभी सम्भव थी जब कि वह अपने पिछले जन्मों के कर्मों का इस जन्म में भोग करने के साथ नये सत्कर्मों, ईश्वरोपासना, परोपकार, पीडि़तों की सेवा व सहायता आदि रूपी शुभ कर्मो की इतनी पूंजी एकत्रित करते कि ईश्वर से उन्हें सर्वोत्तम सुख मोक्ष की प्राप्ति होती। इस जन्म वा परजन्म में उन्नति की स्थिति तभी सम्भव है कि जब लोग महर्षि दयानन्द वा सत्य सनातन ईश्वर प्रदत्त वैदिक धर्म वा वेद के मार्ग पर पूर्णतः चलें जैसे कि महर्षि दयानन्द व उनके शिष्य पं. गुरुदत्त विद्वार्थी, स्वामी श्रद्धानन्द, पं. लेखराम जी व स्वामी दर्शनानन्द जी आदि चले थे।

 वैदिक धर्म ईश्वर प्रदत्त होने से पूर्ण सत्य मान्यताओं व सिद्धान्तों पर आधारित धर्म है। महर्षि दयानन्द वैदिक धर्म की तर्क व युक्ति पूर्वक विवेचना अपने सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों में की हुई है। अपनी विशेषताओं के कारण वेद ही विश्व के सभी मनुष्यों का श्रेष्ठतम् धर्म है। विश्व में वैदिक धर्म की स्थापना से सभी अपना जीवन सुख व शान्ति पूर्वक भोग सकते हैं और परजन्म में भी उन्नति वा मोक्ष को प्राप्त हो सकते हैं। मनुष्य की आत्मा और जीवन की उन्नति करने का एक ही मार्ग है और वह है सुसंस्कार जो वेदाचरण वा सत्याचरण से मिलते हैं। वेदाचरण एवं सत्याचरण दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। हम विश्व के सभी मतों के आचार्यों व लोगों से संस्कृत पढ़कर वेदों की परीक्षा करने, सभी मत-मतान्तरों का अध्ययन कर सत्य व श्रेष्ठ को स्वीकार करने का अनुरोध करते हैं। इसी में संसार के सभी लोगों का हित छिपा हुआ है। इसी के लिए महर्षि दयानन्द ने अपना पूरा जीवन समर्पित किया था और अकाल मृत्यु का वरण किया था। वर्तमान व परजन्म की उन्नति का वेद मार्ग के आचरण के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग नहीं है। इन्हीं शब्दों के साथ लेख को विराम देते हैं।

 **-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**

**ओ३म्**

 **‘पण्डित चमूपति द्वारा ऋषि दयानन्द का गौरव गान’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 ऋषि दयानन्द का व्यक्तित्व और कृतित्व सात्विक बुद्धि के लोगों के आकर्षण व प्रेरणा का स्रोत वा केन्द्र रहा है। अनेक लोग आर्यसमाज की विचारधारा का परिचय पाकर और सत्यार्थप्रकाश पढ़कर या फिर आर्यसमाज के समाज सुधार के कार्यों से प्रभावित होकर आर्यसमाजी वा वैदिक धर्मी बने और फिर उन्होंने देश, धर्म व समाज की प्रशंसनीय सेवा की। ऐसे ही आर्यसमाज के एक सुप्रसिद्ध विद्वान एवं बहुमुखी प्रतिभा के धनी पण्डित चमूपति जी थे। आप संस्कृत, हिन्दी, इग्लिश, उर्दू व फारसी आदि अनेक भाषाओं के विद्वान व प्रभावशाली वक्ता थे। उनका व्यक्तित्व भी आकर्षक एवं प्रभावशाली था। आपकी हिन्दी, संस्कृत व उर्दू आदि में अनेक रचनायें हैं जिनमें से एक सुप्रसिद्ध रचना **‘‘सोम सरोवर”** भी है। सोम सरोवर में आपने सामवेद के पवमान सूक्त के मन्त्रों की अत्यन्त मनोहर व्याख्या की है। आर्यसमाज के विद्वान व नेता महाशय कृष्ण ने इस पुस्तक की समीक्षा कर प्रशंसा करते हुए लिखा था कि यदि निष्पक्षता से साहित्य का नोबेल पुरुस्कार दिया जाता तो पण्डित चमूपति जी की यह रचना नोबेल पुरुस्कार प्राप्त करने योग्य थी। ऐसे विद्वान द्वारा महर्षि की महिमा का गान करने वाले कुछ शब्द पाठकों को भेंट कर रहे हैं।

 पण्डित चमूपति जी ऋषि दर्शन नामक अपनी लघु पुस्तिका में **‘अमर दयानन्द’** शीर्षक के अन्तर्गत लिखते हैं कि **‘आज केवल भारत ही नहीं, सारे धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक संसार पर दयानन्द का सिक्का है। मतों के प्रचारकों ने अपने मन्तव्य बदल दिए हैं, धर्म पुस्तकों के अर्थों का संशोधन किया है, महापुरुषों की जीवनियों में परिवर्तन किया है। स्वामी जी का जीवन उन जीवनियों में बोलता है। ऋषि मरा नहीं करते, अपने भावों के रूप में जीते हैं। दलितोद्धार का प्राण कौन है? आदर्श सुधारक दयानन्द। शिक्षा प्रचार की प्रेरणा कहां से आती है? गुरुवर दयानन्द के आचरण से। वेद का जय जयकार कौन पुकारता है? ब्रह्मर्षि दयानन्द। देवी (स्त्री) सत्कार का मार्ग कौन दिखाता है? देवीपूजक दयानन्द। गोरक्षा के विषय में प्राणिमात्र पर करूणा दिखाने का बीड़ा कौन उठाता है? करूणानिधि दयानन्द। (संस्कृत व आर्यभाषा हिन्दी के प्रचार प्रसार की प्रेरणा कौन करता है? वेदर्षि दयाननन्द।) आओ! हम अपने आपको ऋषि के रंग में रंगे। हमारा विचार ऋषि का विचार हो, हमारा आचार ऋषि का आचार हो, हमारा प्रचार ऋषि का प्रचार हो। हमारी प्रत्येक चेष्टा ऋषि की चेष्टा हो। नाड़ी नाड़ी से ध्वनि उठे - महर्षि दयानन्द की जय।**

**पापों और पाखण्डों से ऋषिराज छुड़ाया था तुने।**

**भयभीत निराश्रित जाति को निर्भीक बनाया था तूने।।**

**बलिदान तेरा था अद्वितीय हो गई दिशाएं गुंजित थी।**

**जन जन को देगा प्रकाश वह दीप जलाया था तूने।।’**

हम आशा करते हैं कि पाठकों को यह लघु प्रयास पसन्द आयेगा।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**